International Journal of Applied Research 2017; 3(2): 464-467

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(2): 464-467
www.allresearchjournal.com
Received: 10-12-2016
Accepted: 12-01-2017

डॉ सुनीता शर्मा
सहायक आचार्य, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ सुनीता शर्मा
सहायक आचार्य, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत

मेवाड़ संस्कृत साहित्य में स्त्रियों की स्थिति

डॉ सुनीता शर्मा

प्रस्तावनाः

मेवाड़ में भारतीय संस्कृति की प्रतीक देववाणी संस्कृत के विद्वानों को राजस्व प्राप्त होता रहा है और इसके परिणाम स्वरूप राज्याश्रित विद्वानों ने विविध विषयों के ग्रंथों का सर्जन कर संस्कृत- साहित्य की श्री-वृद्धि करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

मेवाड़ में उपलब्ध संस्कृत साहित्य का गुण और परिणाम दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण स्थान हैं। यहां महाकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक काव्य के अतिरिक्त ज्योतिष्य, संगीत, शिल्पशास्त्र, कामशास्त्र, टीकाग्रन्थ एवं कोश आदी से संबंधित अनेक रचनाएं उपलब्ध होती है।

मेवाड़ के महाराणा राजसिंह (1652 से 1680) का काल साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना गया है। महाराणा राजसिंह विद्वानों के संरक्षक थे। साहित्य के प्रति विशेष अनुराग के कारण ही महाराणा राजसिंह विद्वानों एवं आचार्य को एकत्र करने में विशेष रूचि रखते थे। उनके संरक्षण में वैदिक-साहित्य, पौराणिक-साहित्य, कर्मकाण्डीय साहित्य, ज्योतिष इतिहास एवं काव्य आदि विषयों के सर्वोत्कृष्ट ग्रंथों का प्रणयन हुआ।

महाराणा राजसिंह के काल में ऐतिहासिक काव्य, मुक्तक काव्य, शिलांकित प्रशस्ति काव्य, औद्योगिक काव्य आदि लिखे गये। महाराणा राजसिंह ने मेवाड़ पर विक्रम संवत 1709 से 1737 तक शासन किया। तत्कालीन समाज की जो संस्कृति थी, महाराणा इसी की उपज थे। उन्होने भी अपने सांस्कृतिक उत्तरदायित्व का पूरी निष्ठा के साथ निर्वाह किया था। जिसके प्रमाण राज प्रशस्ति, राजरत्नाकर, अमर काव्य आदि महाकाव्यों में मिलते हैं। इन महाकाव्यों में स्त्रियों की स्थिति के बारे में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त होती हैं।

स्त्रियों की स्थिति

मेवाड़ तत्कालीन साहित्य द्वारा स्त्रियों की दशा पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। स्त्रियों को धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेने का अधिकार प्राप्त था। महाराणा अपनी पत्नियों के साथ धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण करते थे। महाराणा राजसिंह ने राजमुद्रा प्रतिष्ठा के अवसर पर पत्नी सहित व्रत रखा एवं सूत्र-वेष्टन किया । [1] राजसमुद्र-प्रतिष्ठा महोत्सव में राजपरिवार एवं सामान्य स्त्रियों के जुलूस में जाने का उल्लेख भी प्राप्त होता है। महाराणा मोकल व उसकी पत्नी के द्वारका तीर्थ जाने का भी उल्लेख प्राप्त होता है-

स मोकलो भूमिपति: कदाचित् सानीकिनीक: सह राजपत्न्या।
तीर्थाभिषेकाहितपुण्यपुंजो द्वारावतीतीर्थमुपाजगाम।। राजरत्नाकर 4/22)

महाराणा जगतसिंह की माता ने द्वारका, प्रयाग, शूकरतीर्थ की यात्राएं की, ओर चांदी का तुलादान भी किया।

कवि रणछोड़ भट्ट के विवरणों से भी ज्ञात होता है कि स्त्रियों की दशा समाज में अच्छी थी। स्त्रियाँ जन कल्याण कार्यों में भाग लेती थी। तीर्थ यात्राओं पर जाती थीं एवं तुलादान करती थीं। दीपावली के अवसर पर जाम्बुवती ने द्वारका की तीर्थ यात्रा की और चांदी का तुलादान भी किया। [2]

राजपरिवार की स्त्रियों से वाटिकाओं का प्रतिष्ठा कार्य भी करवाया जाता था-

माघेत्र शुक्लसप्तम्यां राजसिंहनुपप्रिया।
राठोडरूपसिंहस्य पुत्री जोधपुरी व्यधात्।।
त्रिंशत्सहसरजतमुद्रासृष्टां प्रतिष्ठितां।
वापिकां राजनगरे राजसिंहनुपाज्ञया।। (राजप्रशस्ति 14/11-12)

अर्थात् राठौड़ रूपसिंह की पुत्री राजसिंह की रानी जोधपुरी ने महाराणा की आज्ञा से राजनगर में वापिका की प्रतिष्ठा की, जिसके निर्माण में तीस हजार रूपये व्यय हुए। [3]

रानी रामरसदे द्वारा भी देबारी के घाटे में वापिका की प्रतिष्ठा करवायी गई, जिसमें चौबीस हजार रूपये व्यय हुए। महाराणाओं की माताएँ धार्मिक कार्यों में भाग लेती थी, उनके द्वारा प्रजाहित कार्यों को करवाया जाता था। जगत्सिंह की माता ने सम्पूर्ण तीर्थों को करने के बाद ब्राह्मणों को भूमि सहित धन-धान्य का दान दिया। माता जनादे द्वारा धार्मिक उत्सवों को मनाना और उसी दिन से लोकहित कार्यों में लगना आदि के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं-

> षोडशके तु शतके गतेऽब्दके, स्वष्टयुकनवतिसंख्यऊर्जके।
> दीपकोत्सवदिने सुसैन्ययुक, लोकसार्थसहितां हिते परा।। (अमरकाव्य 20/30)

अर्थात् वि.सं. 1698 दीपावली के दिन सेना सहित जगत्सिंह की माता लोकहित कार्य में लग गई। प्रस्तुत साहित्य में राजवंश का ही वर्णन है, अतः स्त्रियाँ धार्मिक कार्यों उत्सवों में भाग लेती थीं।

विवाह के संदर्भ में मेवाड में हिन्दू समाज में विधवाओं की स्थिति अच्छी नहीं थी। वे पुनर्विवाह नहीं कर सकती थी। [4] मध्ययुग में सम्मानित परिवारों में भी विधवाओं को पुनर्विवाह करने की अनुमति नहीं थी। तत्कालीन समाज में ऐसा कोई समाज सुधारक भी नही हुआ जिसने विधवाओं की पुन: विवाह आदि स्थिति में सुधार किया हो। [5]

तत्कालीन संस्कृत साहित्य द्वारा ज्ञात होता है कि महाराणाओं की अविवाहित स्त्रियाँ (रखेलें) भी हुआ करती थी। रायमल्ल के पुत्र पृथ्वीराज की अविवाहिता स्त्री थी जिससे बनवीर नामक पुत्र हुआ था। महाराणा जगत्सिंह के अपरिणीताप्रिया (पासवान) से मोहनदास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। महाराणा राजसिंह के विषय में राजप्रशस्ति में उल्लेख प्राप्त होता है कि उनका एक पुत्र नारायणदास उपपत्नी से हुआ था। राणा कुम्भा के अंत पुर में 1600 स्त्रियों का उल्लेख भी प्राप्त होता है। [6] यथा बाप्पा द्वारा 26 वंश की कन्याओं से विवाह का उल्लेख प्राप्त होता है।

उच्च वर्ग की स्त्रियाँ शिक्षित होती थी, उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। उस समय राज्याभिषेक-उत्सव के समय महाराणा रानी के साथ सिंहासन पर बैठते थे । 12वीं शताब्दी में मुगलों के आधिपत्य के साथ ही स्त्रियों में पर्दा-प्रथा का भी प्रारम्भ हो गया था। जिसका प्रभाव रानियों, सामन्तों तथा रईस लोगों पर भी पड़ा 15वीं शताब्दी के बाद स्त्रियों की दशा में सुधार आना प्रारंभ हो गया।

मेवाड़ संस्कृत साहित्य में स्त्रीहरण के भी अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। मेवाड़ के महाराणाओं द्वारा स्त्रीहरण राजनीतिक कारणों से किया जाता था। हरण की गयी स्त्रियों के साथ बुरा व्यवहार नहीं किया जाता था, अपितु उन्हें सम्मानपूर्वक रखा जाता था। अमरकाव्य में उल्लेख प्राप्त होता है कि अमरसिंह ने शेरपुर से खानखाना (अकबर सम्राट का सेनानायक) की स्त्रियों का हरण किया। अमरसिंह ने भूषणों और भव्य भोजनों से उनका सम्मान किया और कुछ समय बाद उनको खानखाना के शिविर में सम्मानपूर्वक भेज दिया। [7] अतः स्पष्ट है कि स्त्रीहरण के पीछे राजनीतिक कारण होता था। महाराणा अमरसिंह ने म्लेच्छ से संधि के पश्चात उन स्त्रियों को सुरक्षित खानखाना के शिविर में पहुंचा दिया।

वैदिक साहित्य में सती होने के विषय में उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। विष्णुधर्म सूत्र में सती होने के विषय में निर्देश प्राप्त होते हैं। विष्णु धर्म सूत्र के अनुसार अपने पति की मृत्यु पर विधवा ब्रह्मचर्य रखती थी या उसकी चिता पर चढ़ जाती थी।

महाभारत काल में स्त्रियों के सती होने के उल्लेख प्राप्त होते हैं। पाण्डु की प्रिय रानी माद्री कीचक के साथ, सैरन्धी वसुदेव के साथ देवकी, भद्रा, रोहिणी अपने पति के साथ सती हुई थी। प्राचीन काल में सती शब्द के लिए अन्वारोहण, सहगमन, अनुमरण आदि शब्द प्रयुक्त होते थे। [8]

सती शब्द का अर्थ अमर अथवा सत्य पर स्थिर रहने वाली होता है। [9] प्रथा का अर्थ होता है आवश्यक रूप से उसकी पालना करना परन्तु ऐसा नहीं था। महाराणा राजसिंह कालीन साहित्य में भी स्त्रियों के सती होने के उदाहरण प्राप्त होते हैं।

कवि रणछोड भट्ट कृत अमरकाव्य के विवरण से ज्ञात होता है कि शिलादित्य की पुत्रवधू ने अपने पुत्र को लखमावती नामक श्राह्मणी को सौंप दिया और सती धर्म का पालन किया-

> ततः शिलादित्यवधू राठोडिकुलजोत्मा।
> असूत्युत्रं सूर्यपूजां कृत्या पुत्रं पतिव्रता ।।
> काचिदन्या ब्राह्मणी तु नाम्ना सा लखमावती।
> तदके स्थापयित्वा तं, सतीधर्म तदाकरोत् ।। (अमरकाव्य 2/9,10)

सदाशिव नागर कृत राजरत्नाकर में राहप-माहप के प्रसंग में कपिल साधु के दिवंगत होने पर उसकी पत्नी वेदवती नामक ब्राह्मणी के सती होने का उल्लेख होता है। वेदवती नामक ब्राह्मणी राहप से कहती है-

> शरीरावयवैर्भ विना विकटार्चिषा।
> मां ज्वालय महाभाग याचेऽहमधुनेति च।।
> तच्छ्रुत्वा वचनं बोधिद्रुमकाष्टैः स राहपः।
> यथावत्सह पत्या तां चितारूढामदीदहत्।। (राजरत्नाकर 3/46-47)

अर्थात् हे महाभाग प्रचण्ड लपटों वाली अग्नि से पतिदेव के अंगों के साथ मुझे जला दो, यही मेरी तुमसे याचना है। इसके पश्चात् राहप ने पति के साथ चिता पर आरूढ उस ब्राहाणी का पीपल की लकड़ियों से विधिपूर्वक दाह-संस्कार किया।

तत्कालीन समाज में महाराणाओं की पत्नियों द्वारा सती होने के उल्लेख प्राप्त नहीं होते। राहप-माहप के प्रसंग में भी कवि ने सती शब्द का प्रयोग नहीं किया है। छठी शताब्दी से 19वीं शताब्दी तक के स्मारक, स्तम्भ मेवाड में उपलब्ध होते हैं, जिनसे बहुविवाह सती होने के उल्लेख प्राप्त होते हैं। लार्ड विलियम बैंटिक्ट ने वि.सं. 1886 में सती प्रथा को समाप्त करने के लिए कानून बनाया, जिसके पश्चात् यह प्रथा मेवाड़ में समाप्त हो गयी। [10]

शिलालेखों तथा काव्य ग्रंथों में अपने पति की प्रति पूर्ण निष्ठावान् पत्नी के लिए सती शब्द का प्रयोग किया जाता रहा है। अपने पति की मृत्यु पर उसके साथ जल मरने वाली स्त्रियां सती कही जाती थीं। महाराणाओं के साथ कई राणियों, सहेलियों, पासवानों, खवासणो के सती होने का उल्लेख स्मारकों और साहित्य में मिलता है मैवाड़ के राजकुल की प्रथम सती का उल्लेख पुष्कर के अष्टोत्तरशत लिंग वाले मंदिर में सती स्तम्भ से प्राप्त होता है। ठाकुर कोल्हण (गुहिल वंशी) की स्त्री वि. सं. 1187 में सती हुई। मेवाड़ के इतिहास में अंतिम सती का उल्लेख महाराणा स्वरूपसिंह के साथ ऐंजाबाई का होना मिलता है। [11]

वेश्यावृत्ति

मेवाड़ संस्कृत साहित्य के अध्ययन द्वारा यह भी ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में वैश्यावृत्ति प्रचलित थी। कवि सदाशिव नागर कृत राजरत्नाकर में रानी की सखी ललिता राजनगर का वर्णन करते हुए महाराणा राजसिंह से कहती है-

परिगुम्फितपादनूपुरा नगरद्वारि कुमंचसंस्थिताः ।
असितोष्ठपुटा हि धूमपाः शतशो वारसरोजलोचनाः।। (राजरत्नाकर 18/29)

अर्थात् पांवों में नुपूर बांधे हुए. नगर द्वार पर गंदे मांचों पर बैठी हुई तथा धूम्रपान से काले होंठों वाली सैकडों वैश्याएं यहाँ राजनगर में हैं।

तत्कालीन समय में वैश्याएं नर्तकियों का कार्य करती थीं धार्मिक उत्सवों पर भी वैश्याओं के नृत्य का विशेष आयोजन होता था। यात्रा या प्रयाण के अवसर पर वैश्याओं के दर्शन को शुभ माना जाता था। विवाह उत्सवों पर इनको नृत्य के लिए बुलाया जाता था।

मेवाड़ समाज में स्त्रियाँ पतिव्रता होती थीं। कवि कन्ह व्यास कृत "एकलिंगमाहात्म्य" में पतिव्रत धर्म के विषय में कहा गया है कि विवाह के बाद स्त्री अपने पति पर आश्रित रहती थी। पति की इच्छा व आवश्यकता पर ही उसकी इच्छा निर्भर करती थी। अतः पतिव्रत धर्म का पालन मेवाड़ में तत्कालीन समय में दिखायी देता था। राजनगर-वर्णन के प्रसंग में ललिता नामक सखी कहती है कि मेवाड़ की स्त्रियां अपने पति को विश्वसनीय पुरुष, प्रभु एवं देवता स्वरूप मानती थी। पति के दर्शन से वे अपने समस्त पापों को नष्ट हुआ मानती थीं। [12] राहप-माहप के प्रसंग में वेदवती ब्राह्मणी पतिव्रता थी, वेदवती कहती है, पति ही कुल स्त्रियों का देवता होता है। वह दुराचारी हो तो भी उसका त्याग नहीं करना चाहिए। यथा-

मेवाड़ संस्कृत साहित्य द्वारा स्त्रियों में पर्दा प्रथा होने की जानकारी भी प्राप्त होती है। यद्यपि स्त्रियों के अवगुंठन के विषय में उल्लेख प्राप्त नहीं होता किन्तु अन्तपुर का उल्लेख साहित्य में प्राप्त होता है, जिससे ज्ञात होता है कि स्त्रियों को अन्त पुर में रखा जाता था। अन्त पुर स्त्रियों के रहने के लिए अलग कक्ष होते थे। अतः इससे स्पष्ट होता है कि स्त्रियों को पर्दे में रखा जाता था। महाराणा कुंभा के अन्त पुर में 1600 स्त्रियां थी। [13] स्त्रियों द्वारा दान देने के प्रसंग में भी अन्त पुर का उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें रामपुरा नरेश हठीसिह की पत्नी उदारनन्दकुँवरि ने अपनी मातामही (नानी) के साथ रणछोड भट्ट को उमामहेश्वर दान दिया-

राणान्तः पुरमध्ये तु संस्थाप्यैव तु मां गुरोः ।
वंशज राणवंश्यानां, मत्वा सत्वगुणान्वितम्।।
रणछोडारख्यभट्टाय महा शय्याद्यलकृतम्।
उमामहेश्वरदानं ददौ हैमोघभूषितम्।। (अमरकाव्य 20/69-70)

अर्थात मुझ रणछोड भट्ट को राणाओं के गुरुओं का वंशज एवं सत्वगुण युक्त समझकर अन्त पुर में ही रखकर शय्या स्वर्ण अलंकार आदि से सुशोभित "उमा महेश्वर" दान दिया।

अन्यत्र भी कई स्थलों पर अन्त पुर के उदाहरण प्राप्त होते हैं, जिससे स्त्रियों को पर्दे में रखने की प्रथा की जानकारी होती है मेवाड़ में प्राचीन समय में पर्दा-प्रथा का प्रचलन नहीं था, किन्तु मुगल प्रवेश के साथ ही इस प्रथा का प्रचलन आवश्यक हो गया था।

मेवाड़ साहित्य में दास-दासियों का भी उल्लेख प्राप्त होता है। दास-प्रथा प्राचीन काल से ही मेवाड़ में प्रचलित थी। राजपूत कन्या को विवाह के अवसर पर कुछ दासियों दहेज के रूप में दी जाती थी जो जीवन पर्यन्त उसकी सेवा करती थी। दास-प्रथा तत्कालीन समय में कलुषित नहीं थी। दास दासियाँ परिवार के सदस्य की तरह रहते थे। [14]

रणछोड भट्ट कृत अमरकाव्य में नासिरशाह नामक योद्धा ने हासी के युद्ध में शत्रु को देखते ही उनकी पत्नियों को दासी बना लिया –

नासिरसाहि योद्धा यो हासी-युद्धेऽरिदर्शनात्।
दासीकृत्तारिदासश्च वासी राजन्य- मण्डले । (अमरकाव्य 7/ 37)

अकबर द्वारा शक्तिपूर्वक मालवा में पराजित होने के पश्चात् मालव नरेश बाजबहादुर राणा की सेवा दास के रूप में करता था ।

महाराणा राजसिंह के काल में भी दासियां थीं। स्वर्णतुलादान के अवसर पर महाराणा राजसिंह ने दासियों को स्वर्ण-मुद्राओं से भरी कोथलियां लाने को कहा। अतः स्पष्ट है कि महाराणा दासियों रखते थे। [15] यथा-

दासियों के प्रभुत्व का एक उदाहरण मेवाड वंश में प्राप्त होता है। अमरकाव्य में उल्लेख प्राप्त होता है-

पुरा बांदी भट्यानीभूविशत्यब्दे त्रयोदशे।
शते भुवनसिंहार्य चित्रकूटेश्वरोभवत्।। (अमरकाव्य 6 / 28)

अर्थात पहले दासी रही भटियानी का पुत्र भुवनसिंह वि. सं. 1320 में चित्रकूट का स्वामी बना।

एक अन्य उदाहरण भी प्राप्त होता है जिसमें दासी पुत्र को राजा नहीं बनाने का उल्लेख मिलता है। महाराणा रायमल्ल के पुत्र पृथ्वीराज की अविवाहिता पत्नी से बनवीर हुआ। जिसे रायमल्ल के स्वर्गवास होने के बाद राजा नहीं बनाया।यथा-

अमरकाव्य में दासी के शौर्य से सम्बन्धित उदाहरण प्राप्त होता है। पिछोला नामक जलाशय के सुन्दर दक्षिण तट पर दमदमा महल में महाराणा उदयसिंह विलास के कारण अलसाये हुए सो रहे थे। उसी समय वर्षा के कारण जल महलों तक आ गया तब उदयसिंह ने प्रताप को पुकारा कीका आओ। तब मास में दासी ने महल के शिखर से तैरते हुए जाकर राजकुमार उदयसिंह से यह वृतान्त कहा अतः राजा के शब्द का प्रभुत्व और दासी का साहस आश्चर्य पूर्ण है। [16]

अतः इन दास-दासियों को त्यौहारों पर इनाम दिया जाता था। उनकी सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाता था। उन्हें अपने आश्रयदाता राजा अथवा स्वामी को छोड़कर जाने का भी पूरा अधिकार था।

जौहर

महाराणा राजसिंह कालीन साहित्य द्वारा मेवाड़ की स्त्रियों एवं पुरुषों द्वारा जौहर करने के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। स्त्रियाँ सामूहिक रूप से उस समय अपने आप को भस्म कर देती थी जब शत्रुओं के आक्रमण के समय उनके पतियों के युद्ध से पुनः लौटने की कोई आशा नहीं रहती थी। [17]

डा. के. एम. अशरफ ने "जौहर" शब्द का अर्थ "जतुगृह" लाख या ज्वलनशील पदार्थो से बने घर से किया है. जैसा कि महाभारत में उल्लेख है। परन्तु ऐसे "जतुगृह" धोखे से या भ्रमित करके मारने के लिए बनाये जाते थे। अतः स्वतःस्फूर्त आत्म-बलिदान की भावना से प्रेरित वीरांगनाओं के लिए इसकी कल्पना करना भी व्यर्थ है। अतः जौहर शब्द में शौर्य, बलिदान, नारी जीवन की अस्मिता, निष्कलंकता और प्राणोत्सर्ग की उदात्त भावना का समावेश होता है। [18]

अमरकाव्य में उल्लेख प्राप्त होता है कि लक्ष्मसिंह अपने बारह भाइयों एवं रत्नसिंह सहित युद्ध में मारे गये और तब पदमिनी ने जौहर किया। [19]

अकबर के द्वारा जैमल के मारे जाने पर दुर्गवीरों ने बड़ी-बड़ी लकड़ियां एकत्र कर अन्तःपुर को जला दिया-

अन्तः पुरं ज्वालितमेव तेभ्यः इत्यस्ति हिन्दूकमहाभटानाम् ।
रीतिस्ततः सोऽत्र महाप्रकाश इत्युक्तवान्वै भगवन्तदासः ॥
(अमरकाव्य 15/ 46)

दुर्ग के प्राचीरों के खण्डित हो जाने पर व्यथा और क्रोध से भरे हुए पत्ता और ईश्वरदास ने भी अन्त:पुर जला दिये। [20] अन्त: बालकों के साथ अन्तःपुर का दाह तीन स्थानों पर हुआ। सम्पूर्ण आकाश ज्वालाओं से प्रकाशित हो गया। सभी महल धुओं से भर गये।

अतः रानी पद्मिनी एवं अकबर के समय के जौहर इतने भीषण हुए कि चित्तीड़ दुर्ग का प्रत्येक घर व हवेली जौहर स्थल बन गए। परिस्थितिवश ये प्रथाएं तत्कालीन समय में चल पड़ी थी।

स्त्रियाँ जौहर इसलिए करती थी कि वे शत्रु पक्ष के हाथों में पड़ना नहीं चाहती थीं। समाज में विधवाओं की दशा तत्काल में अच्छी नहीं थी। इसलिए वे जौहर को अंगीकार कर लेती थीं।

अतः स्पष्ट है मेवाड़ में स्त्रियों की स्थिति तत्कालीन समाज में अच्छी थी। परंतु विधवा विवाह की प्रथा नहीं थी। धार्मिक कार्यों में स्त्रियों को साथ में रखा जाता था। दास-दासियों को समाज में सम्मान प्राप्त था। स्त्रियों में पर्दा प्रथा का उल्लेख प्राप्त नहीं होता किंतु अन्त:पुर का उल्लेख प्राप्त होता है। वेश्याओं का उल्लेख मिलता है शुभ कार्यों में उनका दर्शन से माना जाता था। महिलाएं शिक्षित थी धार्मिक कार्यों में महिलाओं को पुरुष वर्ग साथ में रखता था। कुल मिलाकर महिलाओं की स्थिति मेवाड़ समाज में अच्छी थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. राजरत्नाकर, सर्ग 21, श्लोक 2, 21
2. राजपरास्ति, सर्ग, श्लोक 31, 32
3. राजप्रशस्ति, सर्ग 13, श्लोक 28,.29
4. मेवाड़ का इतिहास, पृ. 292
5. सोश्यल लाइफ इन मेडाइवल राजस्थान, पृ.119
6. राजरत्नाकर, सर्ग 4. श्लोक 39
7. अमरकाव्य, सर्ग 17, श्लोक 56
8. धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग 1, पृ. 349
9. राजस्थान की संस्कृति में नारी, पृ. 92
10. उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ. 1117-1118
11. वही. भाग 1, पृ. 224, 783
12. राजरत्नाकर, सर्ग 18, श्लोक 27
13. राजरत्नाकर, सर्ग 4, श्लोक 33
14. उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 1, पृ. 1116
15. राजप्रशस्ति, सर्ग 17, श्लोक 23, 24
16. अमरकाव्य, सर्ग 14, श्लोक 74-77
17. सोश्यल लाइफ इन मेडाइवल राजस्थान, पृ. 129-130
18. मज्झमिका, मेवाड़ संस्कृति एवं परम्परा, भाग 22-23, पृ. 196
19. अमरकाव्य, सर्ग 7. श्लोक 31-32
20. अमरकाव्य, सर्ग 15, श्लोक 48